2006:CGHC:6696

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

विविध दाण्डिक याचिका क्र. 71/2006

सुनिल सिंह और दो अन्य

विरुद्ध

छत्तीसगढ़ राज्य

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

आदेश हेतु नियत : 03.10.2006

सही /—

दिलीप रावसाहेब देशमुख

न्यायाधीश

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

विविध दाण्डिक याचिका क्र. 71/2006

समक्ष: माननीय श्री दिलीप रावसाहेब देशमुख, न्यायमूर्ति

सुनिल सिंह और दो अन्य

विरुद्ध

छत्तीसगढ़ राज्य

उपस्थित:_

श्रीमती शर्मिला सिंघई, विद्वान अधिवक्ता, याचिकाकर्ताओं की ओर से

श्री जी. के. बेरीवाल, उप महाधिवक्ता, राज्य की ओर से

आदेश

(दिनांक 3 अक्टूबर 2006 को पारित किया गया)

1. श्री व्वी. बी. सिंह. माननीय प्रथम अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, सूरजपुर द्वारा दाण्डिक पुनरीक्षण क्रमांक 156/2006 में पारित दिनांक 12.07.2006 के उस आदेश, जिसमें उन्होंने अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, सूरजपुर द्वारा दाण्डिक प्रकरण क्रमांक 405/2006 में दिनांक 30.06.2006 को पारित उस आदेश की पुष्टि की है, जिसमें याचिकाकर्ताओं द्वारा दिनांक 29.06.2006 को दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन प्रस्तुत आवेदन को अस्वीकार कर दिया गया था; से व्यथित होकर याचिकाकर्ताओं द्वारा यह याचिका दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन प्रस्तुत की गयी है।

2. अविवादित तथ्य यह हैं कि याचिकाकर्ताओं को अपराध क्रमांक 08/2006 में धारा 395 भारतीय दण्ड संहिता के अधीन अपराध के लिए पुलिस चौकी भटगांव, थाना प्रतापपुर द्वारा दिनांक 31.03.2006 को गिरफ्तार किया गया था। उसी दिन उन्हें अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, सूरजपुर के समक्ष प्रस्तुत किया गया, जिन्होंने समय समय पर उन्हें न्यायायिक अभिरक्षा में प्राधिकृत किया। दिनांक 29.06.2006 को अभियोग पत्र दाखिल किये जाने के पूर्व, याचिकाकर्ताओं की ओर से दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन प्रातः 11:00 बजे एक आवेदन प्रस्तुत किया गया। उक्त आवेदन पर तर्क श्रवण किये गए। उसी दिन लगभग अपराह्न 4:00 बजे पुलिस चौकी भटगांव, थाना प्रतापपुर द्वारा उपरोक्त अपराध क्रमांक 08/2006 में याचिकाकर्ताओं के विरुद्ध धारा 395 भा. द. स. के अधीन अभियोग पत्र प्रस्तुत किया गया था। दिनांक 30.06.2006 को, माननीय अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, सूरजपुर ने उक्त आवेदन को एकमात्र इस आधार पर अस्वीकार कर दिया कि न्यायिक अभिरक्षा हेतु स्वीकृत अवधि की गणना करते समय याचिकाकर्ताओं की गिरफ्तारी की तिथि को गणना से अपवर्जित रखा जाना चाहिए और यह निर्धारित किया जाना चाहिए कि अभियोग पत्र उक्त अवधि के भीतर प्रस्तुत हुआ या नहीं। इस प्रकार की गणना करते हुए, विद्वान अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने गिरफ्तारी की तिथि अर्थात् 31.03.2006 को अपवर्जित रखते हुए यह निष्कर्ष निकाला कि अभियोग पत्र 90 वें दिन प्रस्तुत किया गया, अतः याचिकाकर्ताओं को धारा 167(2) दण्ड प्रक्रिया संहिता के अधीन जमानत पर छोड़े जाने का अधिकार प्रोद्भूत /प्राप्त नहीं हुआ। यह भी विवादित नहीं है कि भा. द. स . की धारा 395 के अधीन अपराध होने की स्थिति में, मजिस्ट्रेट अधिकतम 90 दिनों तक अभियुक्त को न्यायिक अभिरक्षा में रखने को प्राधिकृत कर सकते हैं।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

3. श्रीमती शर्मिला सिंघई, याचिकाकर्ताओं की विद्वान अधिवक्ता ने तर्क प्रस्तुत किया कि अभियोग पत्र 91 वें दिन अपराह्न 4:00 बजे प्रस्तुत किया गया था। चूँकि याचिकाकर्ताओं ने भारतीय दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के परंतुक के अधीन अपना अधिकार, अभियोग

पत्र दाखिल होने से पूर्व ही प्रयोग कर लिया था, अतः उन्हें जमानत पर रिहा होने का एक अजेय अधिकार प्रोद्भूत /प्राप्त हो गया था। उन्होंने अपने तर्क के समर्थन में *चगंती सत्यनारायण एवं अन्य विरुद्ध आंध्र प्रदेश राज्य*[1], *उदय मोहनलाल आचार्य विरुद्ध महाराष्ट्र राज्य*[2] तथा *महाराष्ट्र राज्य विरुद्ध श्रीमती भारती चांदमल वर्मा उर्फ/उपनाम आयेशा खान*[3] जैसे निर्णयों पर विश्वास/ भरोसा किया। उन्होंने यह भी तर्क रखा कि गिरफ्तारी की तिथि को अभिरक्षा की अवधि की गणना से अपवर्जित रखने का कार्य, जैसा कि दोनों अधीनस्थ न्यायालयों ने किया, पूर्णतः अवैधानिक था, क्योंकि दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के परंतुक के अधीन अभिरक्षा की अवधि की गणना न्यायिक अभिरक्षा (रिमांड) में दिए जाने की तिथि से ही प्रारंभ मानी जाती है। वहीं दूसरी ओर, श्री जी. के. बेरीवाल, विद्वान माननीय उप महाधिवक्ता ने आलोच्य आदेश के समर्थन में तर्क किया।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

4. दोनों पक्षों के परस्पर विरोधी तर्कों पर विचार करने के पश्चात्, मैंने याचिका के साथ संलग्न दस्तावेजों का अवलोकन किया है। दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 उस प्रक्रिया का निर्धारण करती है जहाँ अन्वेषण 24 घंटे के भीतर पूर्ण नहीं की जा सकती। ऐसे में पुलिस अधिकारी पर यह कर्तव्य अधिरोपित होता है कि वह किसी भी ऐसे व्यक्ति को, जिसे गिरफ्तार किया गया हो और जो पुलिस अभिरक्षा में हो, 24 घंटे की अवधि, जो कि दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 57 द्वारा निर्धारित है, के भीतर निकटतम मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत करे। धारा 167 की उपधारा (2) के अनुसार, वह मजिस्ट्रेट जिसके समक्ष अभियुक्त को प्रस्तुत किया गया हो, चाहे उसके पास उस प्रकरण का विचारण करने का अधिकार हो या न हो, समय–समय पर अभियुक्त को ऐसी अभिरक्षा में रखने हेतु अभियुक्त को निरुद्ध किये जाने की अनुमति प्रदान कर सकता है, जो उसे उपयुक्त प्रतीत हो, परंतु यह अवधि कुल मिलाकर पंद्रह दिनों से अधिक नहीं हो सकती और

1AIR 1986 SC 2130
2(2001) 5 SCC 453
3 AIR 2002 SC 285

यदि उस मजिस्ट्रेट को उस प्रकरण का विचारण अथवा विचारण के लिए अग्रेषित करने की अधिकारिता नहीं है और अधिक निरुद्ध रखना उसके विचार में अनावश्यक है, तो वह अभियुक्त को ऐसे मजिस्ट्रेट के पास, जिसे ऐसी अधिकारिता है, भिजवाने के लिए आदेश दे सकता है । यहाँ उपधारा (2) में दिए गए परंतुक का उल्लेख करना आवश्यक है, जिसका सुसंगत अंश निम्नानुसार है:

" परन्तु–

[(क) मजिस्ट्रेट अभियुक्त व्यक्ति का पुलिस अभिरक्षा से अन्यथा निरोध पन्द्रह दिन की अवधि से आगे के लिए उस दशा में प्राधिकृत कर सकता है जिसमें उसका समाधान हो जाता है कि ऐसा करने के लिए पर्याप्त आधार है, किन्तु कोई भी मजिस्ट्रेट अभियुक्त व्यक्ति का इस पैरा के अधीन अभिरक्षा में निरोध, –

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(i) कुल मिलाकर नब्बे दिन से अधिक की अवधि के लिए प्राधिकृत नहीं करेगा जहां अन्वेषण ऐसे अपराध के सम्बन्ध में है जो मृत्यु, आजीवन कारावास या दस वर्ष से अन्यून की अवधि के लिए कारावास से दण्डनीय है;

(ii) कुल मिलाकर साठ दिन से अधिक की अवधि के लिए प्राधिकृत नहीं करेगा जहां अन्वेषण किसी अन्य अपराध के सम्बन्ध में है,

और, यथास्थिति, नब्बे दिन या साठ दिन की उक्त अवधि की समाप्ति पर यदि अभियुक्त व्यक्ति जमानत देने के लिए तैयार है और दे देता है तो उसे जमानत पर छोड़ दिया जाएगा और यह समझा जाएगा कि इस उपधारा के अधीन जमानत पर छोड़ा गया प्रत्येक व्यक्ति अध्याय 33 के प्रयोजनों के लिए उस अध्याय के उपबन्धों के अधीन छोड़ा गया है;]"

5. सर्वोच्च न्यायालय ने **उदय मोहनलाल आचार्य विरुद्ध महाराष्ट्र राज्य** (पूर्वोक्त) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार अवधारित किया:

"धारा 167, वास्तव में धारा 57 की पूरक है और इस सिद्धांत के अनुरूप है कि अभियुक्त यह माँगने का हकदार है कि उसके साथ न्याय में देरी न हो। अभियुक्त को मजिस्ट्रेट के समक्ष उपस्थित करने का उद्देश्य यह है कि मजिस्ट्रेट यह देख सके कि अभिरक्षा/रिमांड आवश्यक है या नहीं, और साथ ही अभियुक्त को यह अवसर मिले कि वह जिसे चाहे उसके माध्यम से प्रतिनिधित्व कर सके। धारा 167 के अधीन यह शक्ति प्रदान की गयी है कि जब तक पुलिस अन्वेषण कर रही होती है और मजिस्ट्रेट द्वारा विचारण प्रारंभ नहीं हुआ होता, उस अवधि के दौरान अभियुक्त व्यक्ति को अभिरक्षा में रखा जा सकता है। अतः, धारा 167 के माध्यम से मजिस्ट्रेट को प्राधिकृत किया गया है कि वह अभियुक्त को अभिरक्षा में रखने की अनुमति प्रदान कर सके, और यह भी विहित किया गया है कि ऐसी अभिरक्षा की अधिकतम अवधि कितनी हो सकती है। धारा 167 की उपधारा (2) के अधीन, वह मजिस्ट्रेट जिसके समक्ष अभियुक्त को उपस्थित किया गया हो और जब पुलिस किसी अपराध की अन्वेषण कर रही हो, ऐसे अभियुक्त को प्राधिकृत अभिरक्षा में, जैसा वह मजिस्ट्रेट ठीक समझे, इतनी अवधि के लिए, जो कुल मिलाकर 15 दिन से अधिक न हो, दे सकता है ।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

जब धारा 167 की उपधारा (2) के अधीन अधिकतम सीमा अवधि निर्धारित कर दी गई है, तब उस अवधि की समाप्ति के पश्चात क्या परिणाम होंगे, यह धारा 167 की उपधारा (2) में वर्णित परंतुक में स्पष्ट रूप से बताया गया है। यदि संबंधित मामले में निर्धारित 90 दिन या 60 दिन की अवधि (जो भी लागू हो) समाप्त हो जाती है, और उस अवधि के भीतर अन्वेषण अधिकारी/ अभिकरण द्वारा व्यतिक्रम की स्थिति में अर्थात जांच पूर्ण नहीं किये जाने की स्थिति में, अभियुक्त के पक्ष में एक अजेय हक़/अधिकार प्रोद्भूत/उत्पन्न हो जाता है कि उसे जमानत पर रिहा किया

जाए, यदि अभियुक्त जमानत देने के लिए तैयार हो तथा मजिस्ट्रेट द्वारा निर्दिष्ट जमानत, अभियुक्त दे देता है । यह परंतुक स्पष्ट और असंदिग्ध है, और यह निर्देशित करता है कि यदि अभियुक्त जमानत देने के लिए तत्पर है और दे देता है, तो उसे जमानत पर रिहा किया जाएगा जिसे न्यायिक निर्णयों द्वारा "अनिवार्य जमानत" कहा गया है, और ऐसी जमानत को अध्याय 33 के अधीन दी गई जमानत माना जाएगा। धारा 167 की उपधारा (2) का यह परंतुक एक कल्याणकारी प्रावधान है, जिसका उद्देश्य अनिश्चित काल तक अन्वेषण को लंबित रखने की रिष्टि का निवारण करना है, जो कि नागरिक की स्वतंत्रता को प्रभावित करती है।

शब्द "यदि वह जमानत देने के लिए तत्पर है और दे देता है " की व्याख्या भी माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **उदय मोहनलाल आचार्य** (सर्वोच्च न्यायालय) मामले में निम्नानुसार की गई है:

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

> "यदि, किन्हीं कारणों से, अभियुक्त मजिस्ट्रेट द्वारा निर्देशित जमानत देने में असमर्थ रहता है, तब धारा 167 की उपधारा (2) के परंतुक और स्पष्टीकरण–। को एक साथ पढ़ने पर यह स्पष्ट होता है कि ऐसी स्थिति में उपधारा (2) के पैरा (क) में निर्धारित अधिकतम अवधि समाप्त हो जाने के पश्चात भी अभियुक्त की निरंतर अभिरक्षा अनाधिकृत नहीं मानी जाएगी। अतः, यदि इस अवधि के दौरान ही अन्वेषण पूर्ण कर ली जाती है और अभियोग पत्र प्रस्तुत कर दी जाती है, तो अभियुक्त को प्राप्त तथाकथित अजेय अधिकार स्वतः समाप्त हो जायेगा।"

संजय दत्त मामले[4]में सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ द्वारा यह प्रतिपादित किया गया है कि यदि अभियुक्त द्वारा अजेय अधिकार का उपयोग पहले ही न कर लिया गया हो, तो अभियोग पत्र दाखिल होने के बाद, यह अधिकार न तो बना रहता है और न ही प्रवर्तनीय होता है। संजय दत्त प्रकरण में प्रयुक्त "यदि पहले ही

4 1994 SCC (Cri) 1433 (Sanjay Dutt v. State)

उपयोग न कर लिया गया हो" शब्दों को इस रूप में समझा जाना चाहिए कि अभियुक्त ने जमानत के लिए आवेदन किया हो और निर्देश दिए जाने पर जमानत देने के लिए तत्पर हो। अन्य शब्दों में, धारा 167(2) के परंतुक के पैरा (क) में निर्दिष्ट अवधि की समाप्ति पर, यदि अभियुक्त यह कहते हुए जमानत के लिए आवेदन करता है कि अभियोग पत्र अभी तक दाखिल नहीं किया गया है और वह निर्देश मिलने पर जमानत देने के लिए तत्पर है, तथा यह तथ्यात्मक रूप से पाया जाता है कि अभियुक्त की गिरफ्तारी की तिथि से निर्धारित अवधि के भीतर अभियोग पत्र दाखिल नहीं किया गया है, तो यह माना जाएगा कि अभियुक्त ने अपने अजेय अधिकार का उपयोग कर लिया है, भले ही न्यायालय ने उस आवेदन पर विचार नहीं किया हो, जमानत की शर्तें निर्धारित नहीं की गई हों और अभियुक्त ने वास्तविक रूप से जमानत न दी हो।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

6. सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधिक सिद्धांतों के आलोक में विचारणीय एकमात्र बिंदु यह उत्पन्न होता है कि—क्या धारा 167 की उपधारा (2) के परंतुक के पैरा (क) (ii) के अधीन जमानत पर रिहा किए जाने के लिए अभियुक्त के पक्ष में अजेय अधिकार उत्पन्न हुआ है या नहीं—इसका निर्धारण करते समय, क्या गिरफ्तारी की तिथि को उस अवधि की गणना से अपवर्जित रखा जाना चाहिए, जिसके लिए मजिस्ट्रेट अभियुक्त का निरोध प्राधिकृत कर सकता है, यहां तक कि तब भी जब अभियुक्त को उसी दिन मजिस्ट्रेट के समक्ष उपस्थित कर न्यायिक अभिरक्षा में भेज दिया गया हो। दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 167(2) के अधीन, निरोध की अनुमति मजिस्ट्रेट केवल उसी समय से दे सकता है जब न्यायिक अभिरक्षा में प्रतिप्रेषित करने का आदेश पारित किया गया हो। उससे पूर्व, जब अभियुक्त धारा 57 के अधीन पुलिस अधिकारी की अभिरक्षा में होता है, तो वह अवधि मजिस्ट्रेट द्वारा प्राधिकृत निरोध की अवधि नहीं मानी जा सकती। अतः यह स्पष्ट है कि मजिस्ट्रेट द्वारा अभियुक्त को न्यायिक अभिरक्षा में भेजे जाने की

अवधि की गणना उसी दिन से की जानी चाहिए जिस दिन न्यायिक अभिरक्षा में निरुद्ध किया गया हो। केवल वही स्थिति अपवादस्वरूप होगी, जब अभियुक्त की गिरफ्तारी के अगले दिन उसे मजिस्ट्रेट के समक्ष उपस्थित किया गया हो, तब गिरफ्तारी की तिथि को न्यायिक अभिरक्षा की अवधि की गणना से बाहर रखा जाना उचित होगा। मेरे इस दृष्टिकोण को सुप्रीम कोर्ट के निर्णय — **चगंती सत्यनारायण एवं अन्य विरुद्ध आंध्र प्रदेश राज्य** (सर्वोच्च न्यायालय) में दिए गए निर्णय से समर्थन प्राप्त है, जिसमें यह स्पष्ट रूप से कहा गया है:

> "धारा 167(2) के परंतुक (क) में प्रयुक्त शब्द हैं —"इस पैरा के अधीन", "कुल अवधि से अधिक अर्थात 90 दिन/60 दिन", "कोई मजिस्ट्रेट अभियुक्त व्यक्ति का निरोध प्राधिकृत नहीं करेगा" । निरोध केवल उसी समय से प्राधिकृत मानी जा सकती है जब मजिस्ट्रेट द्वारा निरुद्ध करने का आदेश पारित किया गया हो। उससे पूर्व, जब अभियुक्त किसी लोक सेवक की अभिरक्षा में हो — जो कि धारा 57 के अधीन प्राप्त शक्ति द्वारा प्राधिकृत है — वह अवधि मजिस्ट्रेट द्वारा प्राधिकृत निरोध नहीं मानी जा सकती। इसीलिए यह तर्कसंगत है कि 90 दिन या 60 दिन की कुल अवधि की गणना केवल प्रतिप्रेषण के आदेश की तिथि से ही आरंभ हो सकती है।"

7. अतः स्पष्ट है कि न्यायिक अभिरक्षा में निरुद्ध करने की तिथि 31.03.2006 होने के कारण, इसे उस अवधि की गणना में शामिल किया जाना चाहिए जिसके दौरान मजिस्ट्रेट, पुलिस द्वारा अभियोग पत्र दाखिल करने से पहले, अभियुक्त का निरोध प्राधिकृत कर सकता है। इस प्रकार गणना करने पर स्पष्ट होता है कि दिनांक 29.06.2006 को जब आवेदकों ने सुबह 11:00 बजे जमानत पर रिहाई के लिए आवेदन किया, तब 90 दिनों की अवधि पूर्ण हो चुकी थी। दिनांक 29.06.2006, यह 91 वां दिन था, जिस दिन आवेदकों ने धारा 167(2) दण्ड प्रक्रिया संहिता के अधीन अपना अधिकार प्रयोग किया था, वह भी अभियोग पत्र दाखिल होने से पूर्व। दिनांक

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

29.06.2006 को उक्त आवेदन पर तर्क भी माननीय अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा सुने गए थे, अतः उन्हें उक्त आवेदन का तत्काल निराकरण कर देना चाहिए था, न कि इसे अभियोग पत्र दाखिल होने तक लंबित रखा जाना चाहिए था। दरअसल, अभियोग पत्र दिनांक 29.06.2006 को शाम 4:00 बजे दाखिल किया गया।

8 **उदय मोहनलाल आचार्य** (सर्वोच्च न्यायालय) मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह स्पष्ट किया है कि निर्धारित 90 दिनों की अवधि समाप्त हो जाने पर, अन्वेषण अधिकारी/ अभिकरण द्वारा अन्वेषण समय पर पूरी न करने अर्थात व्यतिक्रम के कारण आवेदकों के पक्ष में जमानत पर रिहा किए जाने का अजेय अधिकार प्रोद्भूद/उत्पन्न हो जाता है, यदि अभियुक्त मजिस्ट्रेट के निर्देशानुसार जमानत देने के लिए तत्पर हो और वास्तव में जमानत देता हो। यह परंतुक स्पष्ट और असंदिग्ध है तथा यह निर्देश करता है कि अभियुक्त को जमानत पर रिहा किया जाना चाहिए। यदि अभियुक्त इस अधिकार का उपयोग अभियोग पत्र दाखिल होने से पहले नहीं करता है, तो चाहे अभियोग पत्र निर्धारित 90 दिन या 60 दिन की अवधि (जो भी लागू हो) के बाद दाखिल किया गया हो, तब अभियुक्त का अजेय अधिकार बना नहीं रहता है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

9. उपर्युक्त परिस्थितियों में, धारा 167 की उपधारा (2) के परंतुक (क) के अधीन आवेदकों के पक्ष में जमानत पर रिहा किए जाने का एक अजेय अधिकार प्रोद्भूद/उत्पन्न हो चुका था। आवेदक/अभियुक्त व्यक्तियों ने उक्त परंतुक (क) के अधीन अपना अधिकार प्रयोग करते हुए आवेदन प्रस्तुत किया था। तत्पश्चात, उसी दिन शाम 4:00 बजे बाद में अभियोग पत्र दाखिल किए जाने से आवेदकों के पक्ष में जमानत पर रिहा किए जाने का प्रोद्भूद/उत्पन्न हुआ अजेय अधिकार किसी भी तरह विफल या बाधित नहीं किया जा सकता। दोनों अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा उक्त अधिकार को नकारने के आदेश विकृत हैं जिसके परिणामस्वरूप न्याय विफल होती है।

10. अतः परिणामस्वरूप, धारा 482 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अधीन प्रस्तुत याचिका सफल होती है। प्रथम अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, सूरजपुर द्वारा दिनांक 12.07.2006 को पारित आलोच्य आदेश तथा अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, सूरजपुर द्वारा दिनांक 30.06.2006 को दिया गया आदेश अपास्त किया जाता है। आवेदकों द्वारा दिनांक 29.06.2006 को दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 की उपधारा (2) के अधीन प्रस्तुत आवेदन को स्वीकार किया जाता है। यह आदेश दिया जाता है कि आवेदकों को, व्यक्तिगत रूप से रुपये 50,000/– के स्वीय बंधपत्र पर तथा स्थानीय संपन्न जमानतदार के समान राशि के प्रतिभू पर, जो कि विद्वान विचारणीय न्यायालय के न्यायाधीश को समाधानप्रद हो, ताकि वे न्यायालय द्वारा निर्देशित समय पर नियमित रूप से उपस्थित हो सकें, जमानत पर छोड़ दिया जायेगा । यह भी निर्देशित किया जाता है कि मजिस्ट्रेट जमानतदार के प्रतिभूति बंधपत्र और आवेदकों के स्वीय बंधपत्र स्वीकार करने से पूर्व उसका सत्यापन करें तथा जमानतदार के फोटो को प्रतिभूति बंधपत्र पर अनिवार्य रूप से चिपकाना सुनिश्चित करें।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

नियमों के अनुसार प्रमाणित प्रति।

सही /—

दिलीप रावसाहेब देशमुख

न्यायाधीश

अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु **निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।**

Translated By Prashant Kumar

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur